A Pratibha Spandan Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 14, Issue 01, January-June, 2026

ध्रुपद एवं धमार गायकी के सौन्दर्यात्मक परिप्रेक्ष्य में सांगीतिक तत्वों का विवेचन

Dr. Sarita Negi

Assistant Professor, Music Department, Gurukul Kangri Deemed to be University, Haridwar

Read the Article Online

OPEN ACCESS

Cite this Article

Published on 30 April, 2026

Negi, S. (2026). Dhrupad Evam Dhamar Gayaki Ke Saundaryatmak Paripriekshya Mein Sangitik Tatvon Ka Vivechan. Swar Sindhu, 14(1), 40-42.

सार

ध्रुपद एवं धमार गायकी भारतीय शास्त्रीय संगीत की प्राचीन और महत्वपूर्ण शैलियाँ है, जिनका सौंदर्य स्वर, राग, लय और भाव के संतुलित समन्वय में निहित है। इन दोनों शैलियों में स्वरों की शुद्धता, राग का क्रमबद्ध विस्तार और लय की गंभीरता विशेष महत्व रखती है। ध्रुपद गायकी में गांभीर्य, शांत और वीर रस की प्रधानता होती है तथा आलाप के माध्यम से राग को विस्तार दिया जाता है। यही धमार गायकी में शृंगार और उत्सवपूर्ण भाव (विशेषतः होली से सम्बन्धित) अधिक दिखाई देते हैं। पखावज और तानपूरा की संगति इनकी प्रस्तुति को और प्रभावशाली बनाती है। इस प्रकार ध्रुपद धमार दोनों ही गायन शैलियाँ अपनी विशिष्टता और भावनात्मक अभिव्यक्ति के कारण भारतीय संगीत में विशेष स्थान रखती है।

मुख्य शब्द : *स्वर, राग, लय, ताल, भाव*

भूमिका :-

सौन्दर्य, सृजन मानव का स्वाभाविक गुण है। सौन्दर्य मूलतः दो प्रकार का होता है। प्रथम बाह्य, जो केवल हमारी इन्द्रियों को सुख का अनुभव कराता है और दूसरा आन्तरिक, जो ऊपरी सतह पर क्षण भर के सौन्दर्य द्वारा मोहित नहीं, अपितु अपनी आत्मा से उसका अनुभव करता है। यही सौन्दर्य परम शक्ति की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होता है तथा भारतीय संस्कृति व कला इसी सौन्दर्य प्राप्ति को अपना उद्देश्य मानती हैं।

सुष्ठ उनत्ति आद्रोकरोति चित्तम् इति सुन्दरम्।

अर्थात् सुन्दर वह वस्तु है, जो चित्त को आर्द्र कर देती है। सुन्दर के भाव को सौन्दर्य कहते हैं। मनुष्य के हृदय में स्थाई भाव सदा विद्यमान रहते हैं, उन भावों के उद्दीपन से ही रस उत्पन्न होता है और उस रस से कलाजन्य सौन्दर्य की अभिव्यक्ति होती है। संगीत के माध्यम से सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति की यह महान परम्परा वेदों से ही प्रारम्भ हो जाती है। शारंगदेव कृत 'संगीत-रत्नाकर' में सुंगीत के सन्दर्भ में सौन्दर्य शास्त्र के कतिपय प्रमुख तत्वों के विषय में संकेत सूत्र मिलते हैं। विभिन्न स्वरों और श्रुतियों में अनुक्रम, तारतम्य तथा समन्वय स्थापित कर श्रेष्ठजन विभिन्न स्वरावलियों की सृष्टि करते हैं या अन्य शब्दों में यूँ कहें कि ये श्रेष्ठ स्वरावलियाँ प्राचीन काल से वर्तमान तक भारतीय संगीत में विभिन्न रागों के रूप में प्रतिष्ठित हुई है।

वास्तव में राग भारतीय संगीत की आत्मा है, जो कि प्राचीन काल से वर्तमान तक समय-समय पर प्रचलित हुई। विभिन्न गायन शैलियों के अस्तित्व का कारण बनी एवं अति समृद्ध रूप में आज हमारे सामने है। उत्तर भारतीय संगीत में संगीत के सौन्दर्य पक्ष तथा सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति हेतु प्रयोजन में जाए जाने वाले विशेष तत्वों के विभिन्न गायन शैलियों में निरूपण के सन्दर्भ में श्रेष्ठजनों द्वारा गम्भीरता से विचार किया गया है।

रागों को माध्यम बनाकर विभिन्न सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति के तत्वों (नाद, स्वर, वर्ण, तान, अलंकार, गमक, मींड, सूत, कण, आन्दोलन, खटका, मुर्की, स्थाय, काकु, लय, जाति, स्वरों की प्रकृति, थाट, स्वरों पर बल, वादी तथा संवादी तत्व, विवादी त्वरित का महत्व, विशेष स्वर संगति, राग का चलन, राग का समय-सिद्धान्त इत्यादि) का निरूपण करके विभिन्न गायन शैलियों के विकास की एक समृद्ध परम्परा उत्तर भारतीय संगीत में दृष्टिगत होती है।

इसी सन्दर्भ में मध्यकाल में प्रचलित हुई विशिष्ट गायन शैली ध्रुपद का विशेष स्थान है। इस शैली की गायकी में राग प्रदर्शन दो चरणों में किया जाता है। बन्दिश के पूर्व का चरण आलाप का होता है। ध्रुपद का आलाप नोम्-तोम्, तन्, री आदि शुष्काक्षरों द्वारा किया जाता है, जिनका मूल आधार ऊँ अनन्त नारायण हरि है। प्रारम्भ में अति विलम्बित, आलाप किया जाता है, जिसको मींड, गंभीर गमक और कण आदि द्वारा सजाया जाता है। ध्रुपद में खटका तथा मुर्की आदि का प्रयोग नहीं किया जा सकता। तीनों सप्तकों में राग के आलाप का प्रदर्शन करने के पश्चात् लय थोड़ी बढ़ा कर मध्य लय में स्वरों को मींड, गमक द्वारा आपस में जोड़ा जाता है। इसे जोड़-आलाप कहते हैं। आलाप की अंतिम अवस्था में लय को बहुत बढ़ा दिया

जाता है और एक ही स्वर अथवा स्वर समूह का उच्चारण बार-बार किया जाता है। आलाप का विधिवत् समापन करने के पश्चात् बन्दिश प्रस्तुत की जाती है।

मध्यकाल से पहले अर्थात् प्राचीन काल के संगीत पर एक दृष्टि डालें तो भारतीय संगीत का विभाजन दो भागों में किया गया- गांधर्व एवं गान। जिस संगीत की साधना, योगियों, ऋषियों-मुनियों द्वारा होती है और जिसका उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति है, वह गांधर्व संगीत है। गांधर्व से पृथक् वह संगीत जिसका प्रयोग साधारण जनता के लिए किया जाता है अतः इस संगीत के नियम शिथिल होकर समय एवं संस्कृति की आवश्यकतानुसार परिवर्तनशील हैं, उसे गान कहा गया है। पं0 शारंगदेव के अनुसार-

'निबद्धमनिबद्धं तद् द्वेधा निगदितं बुधैः।'

- संगीत रत्नाकर

अर्थात् जो गान धातु एवं अंगों में बंधा हुआ नहीं होता वह अनिबद्ध गान है और जो संगीत धातु एवं अंगों से बंधा होता है, वह निबद्ध गान है। राग की बढ़त अनिबद्धगान होती है, जिसके अन्तर्गत रागालप्ति और रूपकालाप्ति आते हैं। निबद्ध गान के अन्तर्गत वस्तु, रूपक और प्रबंध आते हैं।

आलप्ति में अंग, धातुओं का बन्धन न होने से इसे, अनिबद्ध कहा जाता है। पं0 शारंगदेव केक अनुसार आलप्ति में राग के सौन्दर्य की व्याख्या वर्ण, अलंकार, गमक तथा स्थाय द्वारा की जाती है।

रागालप्ति

शास्त्रों में आलप्ति के दो प्रकार बताए हैं- रागालप्ति तथा रूपकालप्ति। रागालप्ति में राग के स्वरूप की व्याख्या आलाप द्वारा बिना बंदिश के चार चरणों में की जाती है, जिन्हें स्वस्थान नियम कहते हैं। प्रथम स्वस्थान में गायक स्थायी स्वर अर्थात् ग्रह स्वर से आलाप शुरू करता है और द्वयर्ध स्वर (ग्रह स्वर से चैथा स्वर) के बीच में आलाप करता है। द्वितीय स्वस्थान में पहले स्वस्थान के तमीन स्वरों में आलाप करता है और साथ ही द्वयर्ध स्वर तक जाकर राग के आलाप का विस्तार करता है। तृतीय स्वस्थान में गायक आलाप अर्धस्थिति स्वरों में करता है। अर्धस्थिति स्वरद्वयध स्वर और द्विगुन स्वर स्थायी स्वर से आठवां स्वर) के बीच के सभी स्वर होते हैं। चतुर्थ स्वस्थान में गायक आलाप की बढ़त द्विगुण स्वर और तार स्थान के अन्य स्वरों तक करता है और पुनः वापस स्थायी स्वर पर आ जाता है।

रूपकालप्ति

वह आलप्ति जो रूपक अर्थात् बन्दिश और ताल में की जाती है, रूपकालप्ति कहलाती है, जो कि दो प्रकार की होती है- प्रतिग्रहणिका और भंजनी। रूपकालप्ति में राग के भाव और प्रकृति को विभिन्न रूपों से उभारा जाता है।

ध्रुपद एवं धमार शैलियों में उपरोक्त वर्णित स्वस्थान नियम का पालन किया जाता है। ध्रुपद में राग की शुद्धता, साहित्य और लय-ताल व्यवस्था सभी कुछ उच्चस्तरीय रूप से प्रस्तुत किया जाता है। बन्दिश के प्रस्तुतिकरण में ताल संगति के लिए पखावज पर संगत की जाती है। सम्पूर्ण, बंदिश चार तुकों स्थायी, अन्तरा, संचारी तथा आभोग में विभाजित होती है। बन्दिश गाने के पश्चात् विभिन्न लयकारियों-दुगुन, तिगुन, चैगुन, आड़, कुआड़ आदि में बन्दिश को तथा बोलों को प्रस्तुत किया जाता है। तिहाइयों द्वारा सौन्दर्यात्मक ढंग से 'सम' पर आया जाता है। इस भाग में कलाकार उपज अर्थात् अपनी प्रतिभा द्वारा नए-नए ढंग से राग के सौन्दर्य को दर्शाता है। गंभीर प्रकृति का गीत-प्रकार होने के कारण ध्रुपद की रचना चैताल, सूलताल, गजझंपाताल, ब्रह्मताल आदि में ही की जाती है।

ध्रुपद गान से ही प्रभावित अन्य गायन शैली 'धमार' है। यह सदैव धमार ताल (चौदह मात्रा युक्त) में निबद्ध होता है और इसमें प्रायः बसंत और होली क्रीड़ा का चित्रण मिलता है। ध्रुपद से प्रभावित गान विधा होने के कारण होरी धमार में ध्रुपद की भांति राग के शुद्ध रूप का प्रस्तुतिकरण अपेक्षित है। इसमें खटका, मुर्की इत्यादि चपल स्वर संदर्भों का प्रयोग न करके मींड एवं गमक का विशेष काम होता है।

राग संगीत का आनन्द श्रोता तभी उठाते हैं, जब कलाकार उसमें पूर्णतः डूब चुका होता है। तकनीक और सवर माधुर्य दोनों के मिलने से आनन्दमय संगीत का सृजन होता है। प्रतिभासम्पन्न कलाकार अपनी शिक्षा, रियाज़ और चिन्तन के आधार पर विभिन्न सौन्दर्य तत्वों का प्रयोग कर आलाप द्वारा श्रोताओं को सौन्दर्यानुभूति की चरम सीमा तक ले जाता है, जहाँ आत्मा का परमात्मा से मिलन होता है और अलौकिक सुख की अनुभूति होती है।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 14, Issue 01, January-June, 2026

निष्कर्ष

ध्रुपद एवं धमार गायकी में सांगीतिक तत्वों का सौंदर्य अत्यन्त गंभीर, संतुलित और भावपूर्ण रूप में प्रकट होता है। स्वर की शुद्धता, राग का क्रमबद्ध विस्तार, लय-ताल की स्थिरता तथा भावों की प्रभावी अभिव्यक्ति इन शैलियों की प्रमुख विशेषताएँ है। ध्रुपद जहाँ शांति, भक्ति और आध्यात्मिकता का अनुभव कराता है, वही धमार से उत्सव, शृंगार और चंचलता का सुंदर समावेश मिलता है। पखावज और तानपूरा की संगत इनकी गरिमा को ओर बढ़ाती है। यह कहा जा सकता है ध्रुपद एवं धमार गायकी भारतीय संगीत की ऐसी अमूल्य परिभाषाएँ हैं, जिनमें सौंदर्य गांभीर्य और भावात्मकता का अदभूत समन्वय देखने को मिलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. रामचन्द्र, ध्रुपद धमार गायन, रामचन्द्र पब्लिकेशन, ग्वालियर 1980
2. पूंछ वाले बाबा साहेब, ध्रुपद धमार ग्वालियर, 1985.
3. Qurreshi Humra, Dagars and Dhrupads, Niyogi Books, 2016
4. Sanyal Ritwik and Widdess Richard, Dhrupad : Tradition and Performance in Indian Music, 2004
5. Vatsyayan Kapila, Gangrade K.C., All India Kashiraj Trust, Varanasi, 1986